

[2024:RJ-JP:15215]

राजस्थान उच्च न्यायालय

जयपुर पीठ

एस.बी. आपराधिक अपील (एसबी) संख्या 869/2023

मूलचंद पुत्र जगदीश नारायण, निवासी पहाड़ी चुंगी नाका के पास, वार्ड नंबर 8, तहसील और पुलिस थाना निवाई, जिला टोंक (राज.)

-----परिवादी/अपीलकर्ता

बनाम

भैरुलाल पुत्र रामसहाय, निवासी खादी भंडार के सामने, टोंक रोड, पहाड़ी चुंगी नाका, वार्ड नंबर 8, निवाई, जिला टोंक (राज.)

-----अभियुक्त/प्रतिवादी

अपीलकर्ता के लिए	:	श्री संदीप जैन, अधिवक्ता
प्रतिवादी के लिए	:	श्री मानवेंद्र सिंह, अधिवक्ता श्री सूर्य प्रताप सिंह, अधिवक्ता

माननीय न्यायमूर्ति श्री अनूप कुमार ढांड

आदेश

28/03/2024

रिपोर्ट करने योग्य

कोई भी गलत कार्य उपचारहीन नहीं होता। जहाँविधिक अधिकार है, वहाँ उपचार है। कानून चाहता है कि हर उस मामले में जहाँ किसी व्यक्ति को गलत तरीके से नुकसान पहुँचाया गया हो, उसे उपचार मिलना चाहिए। 'उबी जस इबी रेमेडियम' का सिद्धांत कानून और दर्शन के सिद्धांत का एक मौलिक सिद्धांत माना जाता है। यह न्यायालय का दायित्व है कि वह पक्षकारों के अधिकार की रक्षा और संरक्षण करे और उनका समर्थन करे, न कि उन्हें राहत देने से इनकार करे।

इस अपील में विधिक मुद्दा यह है कि "क्या परिवादी को उपचारहीन छोड़ा जा सकता है, यदि उसने परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 (संक्षेप में '1881 का अधिनियम') की धारा 138 के तहत समयपूर्व शिकायत दर्ज की है।"

1. आपराधिक अपील संख्या 72/2018 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, निवाई, जिला टोंक (संक्षेप में 'अपीलीय न्यायालय') द्वारा पारित दिनांक 24.05.2022 के निर्णय से व्यथित होकर, अपीलकर्ता द्वारा यह वर्तमान आपराधिक अपील दायर की गई है।
2. दिनांक 24.05.2022 के आक्षेपित निर्णय को पारित करते हुए, अपीलीय न्यायालय ने आपराधिक वाद संख्या 27/2013 में विद्वान अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, निवाई, जिला टोंक द्वारा पारित

दिनांक 27.02.2018 के निर्णय के विरुद्ध अभियुक्त-प्रतिवादी द्वारा दायर अपील को स्वीकार कर लिया है और अभियुक्त प्रतिवादी को 1881 के अधिनियम की धारा 138 के तहत आरोप से इस तकनीकी आधार पर दोषमुक्त कर दिया है कि परिवामी-अपीलकर्ता द्वारा समयपूर्व शिकायत दर्ज की गई थी।

3. तथ्य संक्षेप में यह हैं कि अभियुक्त-प्रतिवादी द्वारा परिवामी-अपीलकर्ता के पक्ष में 3,50,000/- रुपये का एक चेक जारी किया गया था और जब उक्त चेक बैंक में प्रस्तुत किया गया, तो वह अभियुक्त-प्रतिवादी के बैंक खाते में "शेष राशि नहीं" होने के आधार पर अनादरित हो गया। अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि उक्त सूचना प्राप्त होने के बाद, परिवामी-अपीलकर्ता द्वारा 1881 के अधिनियम की धारा 138 के तहत अभियुक्त-प्रतिवादी को दिनांक 28.08.2012 को एक विधिक सूचना दी गई थी और अभियुक्त-प्रतिवादी द्वारा उसे दिनांक 01.09.2012 को प्राप्त किया गया था और उसके बाद, अभियुक्त-प्रतिवादी ने दिनांक 06.09.2012 को उक्त विधिक सूचना का उत्तर प्रस्तुत किया और लेनदेन तथा चेक जारी करने से इनकार कर दिया। अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि उसके बाद, अपीलकर्ता द्वारा 1881 के अधिनियम की धारा 138 के तहत अभियुक्त-प्रतिवादी के विरुद्ध विद्वान अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, निवाई, जिला टोंक के न्यायालय में दिनांक 14.09.2012 को एक शिकायत प्रस्तुत की गई थी। अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि अभियुक्त-प्रतिवादी ने 1881 के

अधिनियम की धारा 138 के तहत दंडनीय अपराध के लिए परीक्षण का सामना किया, उसके बाद, उसे विद्वान विचारण न्यायाधीश द्वारा उक्त अपराध के लिए दोषी पाया गया और उसे दिनांक 27.02.2018 के निर्णय द्वारा 1881 के अधिनियम की धारा 138 के तहत दोषी ठहराया गया। उसे 5,00,000/- रुपये के जुर्माने के साथ एक वर्ष के साधारण कारावास की सजा सुनाई गई।

4. अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि उक्त निर्णय के विरुद्ध, अभियुक्त-प्रतिवादी ने अपीलीय न्यायालय के समक्ष एक आपराधिक अपील प्रस्तुत की और यह तर्क दिया कि अपीलकर्ता द्वारा दिनांक 14.09.2012 को एक समयपूर्व शिकायत दर्ज की गई थी, जबकि सूचना अभियुक्त-प्रतिवादी द्वारा दिनांक 01.09.2012 को प्राप्त की गई थी। अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि 1881 के अधिनियम की धारा 138(3) के संदर्भ में 15 दिनों की समाप्ति से पहले एक समयपूर्व शिकायत दर्ज की गई थी, इसलिए, इन परिस्थितियों में, अपीलकर्ता द्वारा दायर समयपूर्व शिकायत कानून की दृष्टि में मान्य नहीं थी। अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि अपने तर्क के समर्थन में, अभियुक्त-प्रतिवादी ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा योगेंद्र प्रताप सिंह बनाम सावित्री पांडे के मामले में (2015) एआईआर (एससी) 157 में रिपोर्ट किए गए निर्णय पर भरोसा किया। अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि योगेंद्र प्रताप सिंह (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए कानून के विधिक प्रस्ताव की गलत

व्याख्या करते हुए, अपीलीय न्यायालय ने परिवादी-अपीलकर्ता द्वारा दायर शिकायत को खारिज कर दिया और अभियुक्त-प्रतिवादी को 1881 के अधिनियम की धारा 138 के तहत आरोप से दोषमुक्त कर दिया। अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि योगेंद्र प्रताप सिंह (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय के अनुसार, अपीलीय न्यायालय को अपीलकर्ता को 1881 के अधिनियम की धारा 138(3) के तहत निर्धारित परिसीमा अवधि के भीतर नए सिरे से शिकायत दर्ज करने के लिए शिकायत वापस करनी चाहिए थी। अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि अपीलकर्ता को नए सिरे से शिकायत दर्ज करने के लिए शिकायत वापस करने के बजाय, शिकायत को ही खारिज कर दिया गया है और अभियुक्त-प्रतिवादी को आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया है। अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि बाद में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने गजानंद बुरंगे बनाम लक्ष्मी चंद गोयल के मामले में आपराधिक अपील संख्या 1229/2022 पर 12.08.2022 को निर्णय करते हुए विचारण न्यायालयों को निर्देश जारी किए हैं कि यदि कोई समयपूर्व शिकायत दायर की जाती है तो परिवादी को नए सिरे से शिकायत दर्ज करने की स्वतंत्रता प्रदान की जाए। अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि इस तथ्य को विद्वान अपीलीय न्यायालय द्वारा अनदेखा कर दिया गया है और आक्षेपित निर्णय पारित किया गया है जो कानून की दृष्टि में मान्य नहीं है और मामले को विचारण न्यायालय को वापस भेजने की आवश्यकता है ताकि योगेंद्र प्रताप सिंह (सुप्रा) के मामले में

माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय के संदर्भ में मुद्दे को नए सिरे से तय किया जा सके।

5. अभियुक्त-प्रतिवादी के अधिवक्ता ने अपीलकर्ता के अधिवक्ता द्वारा उठाए गए तर्कों का विरोध किया है और प्रस्तुत किया है कि परिवादी-अपीलकर्ता द्वारा एक समयपूर्व शिकायत दर्ज की गई थी जिसे अपीलीय न्यायालय द्वारा सही ढंग से खारिज कर दिया गया है और अपीलीय न्यायालय ने परिवादी-अपीलकर्ता द्वारा दायर शिकायत को खारिज करने और प्रतिवादी को 1881 के अधिनियम की धारा 138 के तहत आरोप से दोषमुक्त करने में कोई त्रुटि नहीं की है। अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि इन परिस्थितियों में, इस न्यायालय का हस्तक्षेप उचित नहीं है।
6. बार में की गई दलीलों को सुना और उन पर विचार किया गया और रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया गया।
7. यह तथ्य विवादित नहीं है कि अभियुक्त-प्रतिवादी द्वारा जारी चेक के अनादरण के बाद, अपीलकर्ता ने 1881 के अधिनियम की धारा 138 के तहत दिनांक 14.09.2012 को अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, निवाई, जिला टोंक के न्यायालय में उसके विरुद्ध एक आपराधिक शिकायत दर्ज की। यह तथ्य भी विवादित नहीं है कि अभियुक्त-प्रतिवादी द्वारा जारी चेक के अनादरण के बाद, अपीलकर्ता ने दिनांक 28.08.2012 को अभियुक्त-प्रतिवादी को एक विधिक सूचना भेजी

जिसमें उसे 15 दिनों की अवधि के भीतर चेक राशि वापस करने के लिए कहा गया था। रिकॉर्ड इंगित करता है कि अभियुक्त-प्रतिवादी ने दिनांक 01.09.2012 को उक्त विधिक सूचना प्राप्त की है और उसने दिनांक 06.09.2012 को उत्तर भेजकर अपीलकर्ता को भुगतान करने की अपनी देयता से इनकार किया है। उक्त उत्तर प्राप्त होने के बाद, अपीलकर्ता ने 1881 के अधिनियम की धारा 138 के तहत अभियुक्त-प्रतिवादी के विरुद्ध अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, निवाई, जिला टोंक के न्यायालय में दिनांक 14.09.2012 को एक शिकायत दर्ज की। यह तथ्य भी विवादित नहीं है कि प्रतिवादी ने उपरोक्त अपराध के लिए परीक्षण का सामना किया और अंततः उसे विचारण न्यायालय द्वारा दिनांक 27.02.2018 के निर्णय द्वारा उक्त अपराध के लिए दोषी पाया गया जिसमें अभियुक्त-प्रतिवादी को दोषी ठहराया गया और उसे 5,00,000/- रुपये के जुर्माने के साथ एक वर्ष के साधारण कारावास की सजा सुनाई गई। यह तथ्य भी विवादित नहीं है कि उक्त निर्णय से व्यथित होकर, अभियुक्त-प्रतिवादी द्वारा अपीलीय न्यायालय के समक्ष एक अपील प्रस्तुत की गई थी और अपीलीय न्यायालय ने शिकायत को समयपूर्व शिकायत मानते हुए खारिज कर दिया है क्योंकि इसे परिवादी-अपीलकर्ता द्वारा 15 दिनों की सांविधिक अवधि की समाप्ति की प्रतीक्षा किए बिना दायर किया गया था और तदनुसार, अभियुक्त/प्रतिवादी को दोषमुक्त कर दिया गया है।

8. विचाराधीन मुद्दे पर निर्णय लेने से पहले, 1881 के अधिनियम की धारा 138 और 142 के तहत निहित प्रावधानों को उद्धृत करना लाभप्रद होगा। त्वरित संदर्भ के लिए, 1881 के अधिनियम की धारा 138 और 142 को निम्नानुसार पुनरुत्पादित किया गया है: -

"138. खाते में निधियों की अपर्याप्तता आदि के कारण चेक का अनादरण।— जहाँ किसी व्यक्ति द्वारा किसी अन्य व्यक्ति को किसी ऋण या अन्य देयता के पूर्ण या आंशिक निर्वहन के लिए उस खाते से किसी राशि का भुगतान करने के लिए अपने बैंक के पास रखे गए खाते पर आहरित कोई चेक, बैंक द्वारा बिना भुगतान के वापस कर दिया जाता है, या तो इसलिए कि उस खाते में जमा राशि चेक का सम्मान करने के लिए अपर्याप्त है या वह उस बैंक के साथ किए गए समझौते द्वारा उस खाते से भुगतान की जाने वाली राशि से अधिक है, तो ऐसे व्यक्ति को अपराध करने वाला माना जाएगा और इस अधिनियम के किसी अन्य प्रावधान पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, उसे कारावास से दंडित किया जाएगा [एक अवधि के लिए जिसे दो वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है], या जुर्माने से जो चेक की राशि के दोगुने तक बढ़ाया जा सकता है,

या दोनों से: बशर्ते कि इस धारा में निहित कुछ भी तब तक लागू नहीं होगा जब तक—

(क) चेक को उस तारीख से छह महीने की अवधि के भीतर बैंक में प्रस्तुत नहीं किया गया है जिस पर इसे आहरित किया गया था या इसकी वैधता की अवधि के भीतर, जो भी पहले हो;

(ख) आदाता या चेक का सम्यक् अनुक्रम धारक, जैसा भी मामला हो, बैंक से चेक के बिना भुगतान के वापस होने के संबंध में सूचना प्राप्त होने के [तीस दिनों के भीतर] चेक के आहरक को लिखित में सूचना देकर उक्त राशि के भुगतान की मांग नहीं करता है; और

(ग) ऐसे चेक का आहरक उक्त सूचना की प्राप्ति के पंद्रह दिनों के भीतर आदाता को, या जैसा भी मामला हो, चेक के सम्यक् अनुक्रम धारक को उक्त राशि का भुगतान करने में विफल रहता है। स्पष्टीकरण।— इस धारा के प्रयोजनों के लिए, "ऋण या

अन्य देयता" का अर्थ एक कानूनी रूप से
प्रवर्तनीय ऋण या अन्य देयता है।

142. अपराधों का संज्ञान।—[(1)] दंड प्रक्रिया संहिता,
1973 (1974 का 2) में निहित किसी भी बात के
होते हुए भी,—

(क) कोई भी न्यायालय धारा 138 के तहत
दंडनीय किसी भी अपराध का संज्ञान तब
तक नहीं लेगा जब तक कि आदाता द्वारा,
या जैसा भी मामला हो, चेक के सम्यक्
अनुक्रम धारक द्वारा लिखित में शिकायत
न की गई हो;

(ख) ऐसी शिकायत उस तारीख से एक महीने
के भीतर की जाती है जिस पर धारा 138
के परंतुक के खंड (ग) के तहत वाद
कारण उत्पन्न होता है: [बशर्ते कि
न्यायालय द्वारा निर्धारित अवधि के बाद
शिकायत का संज्ञान लिया जा सकता है,
यदि परिवादी न्यायालय को संतुष्ट करता
है कि उसके पास ऐसी अवधि के भीतर
शिकायत न करने का पर्याप्त कारण था;]

(ग) मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट या प्रथम श्रेणी न्यायिक मजिस्ट्रेट से निम्न कोई भी न्यायालय धारा 138 के तहत दंडनीय किसी भी अपराध का परीक्षण नहीं करेगा।]

(2) धारा 138 के तहत अपराध की जांच और परीक्षण केवल उस न्यायालय द्वारा किया जाएगा जिसके स्थानीय क्षेत्राधिकार में,—

(क) यदि चेक किसी खाते के माध्यम से संग्रह के लिए दिया जाता है, तो बैंक की वह शाखा जहाँ आदाता या सम्यक् अनुक्रम धारक, जैसा भी मामला हो, खाता रखता है, स्थित है; या

(ख) यदि चेक आदाता या सम्यक् अनुक्रम धारक द्वारा भुगतान के लिए प्रस्तुत किया जाता है, अन्यथा किसी खाते के माध्यम से, तो आहरित बैंक की वह शाखा जहाँ आहरक खाता रखता है, स्थित है।
स्पष्टीकरण।—खंड (क) के प्रयोजनों के

लिए, जहाँ आदाता या सम्यक् अनुक्रम धारक के बैंक की किसी भी शाखा में संग्रह के लिए चेक दिया जाता है, तो चेक को बैंक की उस शाखा में दिया गया माना जाएगा जिसमें आदाता या सम्यक् अनुक्रम धारक, जैसा भी मामला हो, खाता रखता है।"

धारा 138 (c) के अवलोकन से पता चलता है कि धारा 138 के तहत अपराध तभी बनता है जब चेक का आहरक सूचना की प्राप्ति के पंद्रह दिनों के भीतर आदाता को या चेक के सम्यक् अनुक्रम धारक को चेक राशि का भुगतान करने में विफल रहता है। यदि चेक के आहरक द्वारा सूचना की प्राप्ति के पंद्रह दिनों के भीतर भुगतान नहीं किया जाता है, तो 1881 के अधिनियम की धारा 142 (b) के अनुसार, उस तारीख से एक महीने की अवधि के भीतर शिकायत दर्ज की जा सकती है जिस पर धारा 138 के खंड (c) के तहत वाद कारण उत्पन्न होता है। संज्ञान केवल लिखित में प्रस्तुत शिकायत पर ही लिया जा सकता है।

9. इस अपील में शामिल मुद्दा अब न्यायनिर्णीत विषय नहीं है क्योंकि यह मुद्दा माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष योगेंद्र प्रताप सिंह

(सुप्रा) के मामले में आया था जहाँ सर्वोच्च न्यायालय ने विचार के लिए निम्नलिखित दो प्रश्न तैयार किए थे:

"(i) क्या परक्राम्य लिखत अधिनियम 1881 की धारा 138 के तहत दंडनीय अपराध का संज्ञान चेक के आहरक को उक्त अधिनियम की धारा 138(ग) के संदर्भ में दी जाने वाली सूचना में निर्धारित 15 दिनों की अवधि की समाप्ति से पहले दायर शिकायत के आधार पर लिया जा सकता है? और,

(ii) यदि प्रश्न संख्या 1 का उत्तर नकारात्मक है, तो क्या परिवादी को शिकायत फिर से प्रस्तुत करने की अनुमति दी जा सकती है, इस तथ्य के बावजूद कि ऐसी शिकायत दर्ज करने के लिए धारा 142(ख) के तहत निर्धारित एक महीने की अवधि समाप्त हो गई है?"

10. योगेंद्र प्रताप सिंह (सुप्रा) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने 1881 के अधिनियम की धारा 138 और 142 के तहत निहित प्रावधानों की

व्याख्या करते हुए, उपरोक्त दो प्रश्नों का उत्तर पैरा 35 से 42 में दिया, जो निम्नानुसार हैं: -

"35. जहाँ तक वर्तमान संदर्भ का संबंध है, बहस मोटे तौर पर परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के परंतुक के खंड (ग) के इर्द-गिर्द केंद्रित है। परंतुक के खंड (ग) की आवश्यकता यह है कि चेक के आहरक को सूचना की प्राप्ति के 15 दिनों के भीतर आदाता को चेक राशि का भुगतान करने में विफल रहना चाहिए। परंतुक का खंड (ग) आहरक को सूचना प्राप्त होने की तारीख से 15 दिनों की कुल अवधि प्रदान करता है ताकि वह चेक के अनादरण पर चेक राशि का भुगतान कर सके।

36. क्या परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत कोई अपराध तब किया गया माना जा सकता है जब परंतुक के खंड (ग) में प्रदान की गई अवधि समाप्त नहीं हुई हो? संहिता की धारा 2(घ) 'शिकायत' को परिभाषित करती है। इस परिभाषा के अनुसार, शिकायत का अर्थ किसी मजिस्ट्रेट को मौखिक या लिखित रूप में किया गया कोई भी आरोप है जिसका उद्देश्य किसी ऐसे व्यक्ति के खिलाफ कार्रवाई करना है जिसने अपराध किया है। अपराध

का किया जाना शिकायत दर्ज करने और ऐसे अपराध का संज्ञान लेने के लिए एक अपरिहार्य शर्त है। परंतुक के खंड (ग) में निहित प्रावधान का एक सामान्य पठन यह स्पष्ट करता है कि परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत किसी अपराध के लिए कोई शिकायत तब तक दर्ज नहीं की जा सकती जब तक कि 15 दिनों की अवधि समाप्त न हो जाए। आहरक/अभियुक्त को सूचना दिए जाने की तारीख से 15 दिनों की समाप्ति से पहले दायर कोई भी शिकायत कानून की दृष्टि में कोई शिकायत नहीं है। यह शिकायत की समयपूर्वता का प्रश्न नहीं है जहाँ इसे आहरक को सूचना दिए जाने की तारीख से 15 दिनों की समाप्ति से पहले दायर किया जाता है, यह कानून के तहत कोई शिकायत नहीं है। वास्तव में, परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 142, अन्य बातों के अलावा, न्यायालय पर धारा 138 के तहत किसी अपराध का संज्ञान लेने से एक विधिक रोक लगाती है, सिवाय लिखित शिकायत के। चूंकि आहरक/अभियुक्त को सूचना दिए जाने की तारीख से 15 दिनों की समाप्ति से पहले परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत दायर शिकायत कानून की दृष्टि में कोई शिकायत नहीं है, जाहिर है,

ऐसी शिकायत के आधार पर किसी अपराध का संज्ञान नहीं लिया जा सकता है। केवल इसलिए कि न्यायालय द्वारा संज्ञान लेने के समय, आहरक/अभियुक्त को सूचना दिए जाने की तारीख से 15 दिनों की अवधि समाप्त हो गई है, न्यायालय को धारा 138 के तहत किसी अपराध का संज्ञान लेने का क्षेत्राधिकार प्राप्त नहीं होता है, जो चेक के आहरक द्वारा सूचना प्राप्त होने की तारीख से 15 दिनों की समाप्ति से पहले दायर शिकायत पर आधारित हो।

37. आहरक/अभियुक्त को सूचना दिए जाने की तारीख से 15 दिनों की समाप्ति से पहले दायर शिकायत को धारा 138 के परंतुक के खंड (ग) के संदर्भ में वाद कारण प्रकट करने वाला नहीं कहा जा सकता है और ऐसी शिकायत पर, जो वाद कारण प्रकट नहीं करती है, न्यायालय संज्ञान लेने में सक्षम नहीं है। धारा 138 का एक संयुक्त पठन, जो यह परिभाषित करता है कि कब और किन परिस्थितियों में कोई अपराध किया गया माना जा सकता है, परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 142(ख) के साथ, जो उस समय बिंदु की स्थिति को दोहराता है जब वाद कारण उत्पन्न हुआ है, इसमें कोई संदेह

नहीं छोड़ता है कि कोई अपराध तब तक किया गया नहीं माना जा सकता जब तक कि धारा 138 के परंतुक के खंड (ग) के तहत निर्धारित 15 दिनों की अवधि वास्तव में समाप्त नहीं हो जाती है। इसलिए, न्यायालय को ऐसी शिकायत का संज्ञान लेने से कानून द्वारा रोका गया है। न्यायालय के लिए ऐसी शिकायत का संज्ञान लेना उचित नहीं है, केवल इसलिए कि विचार या संज्ञान लेने की तारीख पर आहरक/अभियुक्त को सूचना दिए जाने की तारीख से 15 दिनों की अवधि समाप्त हो गई है। हमें कोई संदेह नहीं है कि परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 की सभी पांच आवश्यक विशेषताएं, जैसा कि इस न्यायालय के कुसुम इंगोत्स एंड अलॉयज लिमिटेड 19 के निर्णय में उल्लेख किया गया है और जिसे हमने अनुमोदित किया है, धारा 138 के तहत शिकायत दर्ज करने के लिए संतुष्ट होनी चाहिए। यदि धारा 138 के परंतुक के खंड (ग) में निर्धारित अवधि समाप्त नहीं हुई है, तो न तो कोई अपराध किया गया है और न ही परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत शिकायत दर्ज करने का वाद कारण उत्पन्न हुआ है।

38. इसलिए, हम इस न्यायालय द्वारा नरसिंह दास तापड़ियाल में लिए गए दृष्टिकोण को और नरसिंह दास तापड़ियाल का अनुसरण करने वाले विभिन्न उच्च न्यायालयों के निर्णयों को अनुमोदित नहीं करते हैं कि यदि धारा 138 के तहत शिकायत आहरक/अभियुक्त को सूचना दिए जाने की तारीख से 15 दिनों की समाप्ति से पहले दायर की जाती है तो वह समयपूर्व है और यदि संज्ञान लेने की तारीख पर आहरक/अभियुक्त को सूचना की सेवा की तारीख से 15 दिनों की अवधि समाप्त हो गई है, तो ऐसी शिकायत कानूनी रूप से मान्य थी और, इसलिए, इसे निरस्त किया जाता है।

39. बल्कि, इस न्यायालय द्वारा सरव इन्वेस्टमेंट एंड फाइनेंशियल कंसल्टेंसी में लिया गया दृष्टिकोण, जिसमें इस न्यायालय ने माना था कि परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 परंतुक (ख) के संदर्भ में सूचना की सेवा शिकायत दर्ज करने के लिए वाद कारण का एक हिस्सा थी और चेक के अनादरण के तथ्य के बारे में अभियुक्त को सूचित करना और 15 दिनों के भीतर राशि का भुगतान करने के लिए कहना अनिवार्य था, हमें पसंद आता है। जैसा कि

हमने पहले ही देखा है, सूचना प्राप्त होने की तारीख से 15 दिनों की समाप्ति से पहले चेक के आहरक के खिलाफ कोई शिकायत नहीं की जा सकती है क्योंकि आहरक/अभियुक्त को तब तक कोई अपराध करने वाला नहीं कहा जा सकता है। हम सरव इन्वेस्टमेंट एंड फाइनेंशियल कंसल्टेंसी में इस न्यायालय के निर्णय को और इस निर्णय का अनुसरण करने वाले उच्च न्यायालयों के निर्णयों को भी अनुमोदित करते हैं जिन्होंने यह दृष्टिकोण लिया है कि परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत सूचना की सेवा के 15 दिनों की समाप्ति से पहले दायर शिकायत को कानून की दृष्टि में शिकायत नहीं माना जा सकता है और ऐसी शिकायत पर शुरू की गई आपराधिक कार्यवाही को रद्द किया जाना चाहिए।

40. प्रश्न (i) का हमारा उत्तर, इसलिए, नकारात्मक है।

41. दूसरा प्रश्न यह है कि यदि प्रश्न (i) का उत्तर नकारात्मक है, तो क्या परिवादी को शिकायत फिर से प्रस्तुत करने की अनुमति दी जा सकती है, इस तथ्य के बावजूद कि ऐसी शिकायत दर्ज करने के लिए धारा

142(ख) के तहत निर्धारित एक महीने की अवधि समाप्त हो गई है।

42. परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 142 शिकायत दर्ज करने के तरीके और समय को भी निर्धारित करती है जिसके भीतर परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत किसी अपराध के लिए शिकायत दर्ज की जा सकती है। आदाता या चेक के सम्यक् अनुक्रम धारक द्वारा धारा 138 के तहत की गई शिकायत लिखित में होनी चाहिए और धारा 138 के परंतुक के खंड (ग) के तहत वाद कारण उत्पन्न होने की तारीख से एक महीने के भीतर की जानी चाहिए। धारा 142(ख) के तहत एक महीने की अवधि उस तारीख से शुरू होती है जिस पर धारा 138 के परंतुक के खंड (ग) के तहत वाद कारण उत्पन्न हुआ है। हालांकि, यदि परिवादी न्यायालय को संतुष्ट करता है कि उसके पास निर्धारित एक महीने की अवधि के भीतर शिकायत न करने का पर्याप्त कारण था, तो न्यायालय द्वारा निर्धारित अवधि के बाद शिकायत ली जा सकती है। अब, चूंकि प्रश्न (i) का हमारा उत्तर नकारात्मक है, हम देखते हैं कि आदाता या चेक का सम्यक् अनुक्रम धारक

आपराधिक मामले में निर्णय की तारीख से एक महीने के भीतर एक नई शिकायत दर्ज कर सकता है और, उस स्थिति में, शिकायत दर्ज करने में देरी को परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 142 के खंड (ख) के परंतुक के तहत माफ किया गया माना जाएगा। यह निर्देश ऐसे सभी लंबित मामलों पर लागू माना जाएगा जहाँ हमारी प्रश्न (i) के उत्तर के मद्देनजर शिकायत आगे नहीं बढ़ती है। जैसा कि हमने पहले ही माना है कि धारा 138 के परंतुक के खंड (ग) के तहत जारी सूचना की प्राप्ति की तारीख से 15 दिनों की समाप्ति से पहले दायर शिकायत मान्य नहीं है, परिवादी को बाद के किसी भी चरण में वही शिकायत प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। उसका उपचार केवल एक नई शिकायत दर्ज करना है; और यदि वही धारा 142(ख) के तहत निर्धारित समय के भीतर दर्ज नहीं की जा सकी, तो उसका सहारा परंतुक का लाभ उठाना है, न्यायालय को पर्याप्त कारण से संतुष्ट करना है। प्रश्न (ii) का उत्तर तदनुसार दिया गया है।"

11. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रश्न संख्या (i) का उत्तर यह मानते हुए दिया गया था कि 1881 के अधिनियम की धारा 138 के तहत

सूचना की सेवा के पंद्रह दिनों की समाप्ति से पहले दायर शिकायत को कानून की दृष्टि में शिकायत नहीं माना जा सकता है और ऐसी शिकायत पर शुरू की गई आपराधिक कार्यवाही को रद्द किया जाना चाहिए।

12. उसके बाद, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दूसरे प्रश्न का उत्तर दिया गया कि आदाता या चेक का सम्यक् अनुक्रम धारक आपराधिक मामले में निर्णय की तारीख से एक महीने के भीतर एक नई शिकायत दर्ज कर सकता है और उस स्थिति में, शिकायत दर्ज करने में देरी को 1881 के अधिनियम की धारा 142 के खंड (ख) के परंतुक के तहत माफ किया गया माना जाएगा।

यह ध्यान देने योग्य है कि यह निर्णय ऐसे सभी लंबित मामलों पर लागू किया गया था जहाँ सूचना की प्राप्ति से पंद्रह दिनों की समाप्ति से पहले शिकायत प्रस्तुत की गई थी।

13. योगेंद्र प्रताप सिंह (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय में जारी निर्देशों की अनदेखी करते हुए, अपीलकर्ता द्वारा दायर शिकायत को अपीलीय न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया और अभियुक्त-प्रतिवादी को आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया है। अपीलीय न्यायालय ने परिवादी-अपीलकर्ता द्वारा दायर शिकायत को खारिज करने और अभियुक्त-प्रतिवादी को दोषमुक्त करने में त्रुटि की है। योगेंद्र प्रताप सिंह (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय के अनुसार, अपीलीय

न्यायालय को अपीलकर्ता को 1881 के अधिनियम की धारा 138(ग) और धारा 142(ख) के तहत अनिवार्य प्रावधानों के अनुसार और योगेंद्र प्रताप सिंह के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश के अनुसार एक नई शिकायत दर्ज करने की स्वतंत्रता प्रदान करनी चाहिए थी जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने समयपूर्व शिकायत किए जाने की स्थिति में नई शिकायत दर्ज करने की अनुमति दी है। योगेंद्र प्रताप सिंह (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा लिया गया उपरोक्त दृष्टिकोण गजानंद बुरंगे (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनुसरण किया गया है और पैरा 7 से 11 में निम्नानुसार माना गया है: -

"7. वर्तमान मामले में, जबकि अपीलकर्ता को 8 नवंबर 2005 को सूचना प्राप्त हुई थी, शिकायत पंद्रह दिनों की अवधि पूरी होने से पहले दायर की गई थी। शिकायत केवल 23 नवंबर 2005 के बाद ही दायर की जा सकती थी, लेकिन इसे 22 नवंबर 2005 को दायर किया गया था। परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 142 द्वारा निर्मित विधिक रोक के मद्देनजर, जैसा कि इस न्यायालय के तीन-न्यायाधीशों की पीठ के निर्णय में समझाया गया है, न्यायालय द्वारा संज्ञान लेना कानून के विपरीत था और अपीलकर्ता द्वारा इसकी प्राप्ति की तारीख से पंद्रह दिनों की अवधि

की समाप्ति से पहले शिकायत मान्य नहीं थी।

8. हालांकि, प्रतिवादी की ओर से यह तर्क दिया गया है कि तीन-न्यायाधीशों की पीठ के समक्ष उठाया गया दूसरा मुद्दा निम्नलिखित शर्तों में निपटाया गया है:

"41... अब, चूंकि प्रश्न (i) का हमारा उत्तर नकारात्मक है, हम देखते हैं कि आदाता या चेक का सम्यक् अनुक्रम धारक आपराधिक मामले में निर्णय की तारीख से एक महीने के भीतर एक नई शिकायत दर्ज कर सकता है और, उस स्थिति में, शिकायत दर्ज करने में देरी को परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 142 के खंड (ख) के परंतुक के तहत माफ किया गया माना जाएगा। यह निर्देश ऐसे सभी लंबित मामलों पर लागू माना जाएगा जहाँ हमारी प्रश्न (i) के उत्तर के मद्देनजर शिकायत आगे नहीं बढ़ती है। जैसा कि हमने पहले ही माना है कि धारा 138 के परंतुक के खंड (ग) के तहत जारी सूचना की प्राप्ति की तारीख से 15 दिनों की समाप्ति से पहले दायर शिकायत मान्य नहीं है, परिवादी को बाद के किसी भी चरण में वही शिकायत प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। उसका उपचार केवल एक नई शिकायत दर्ज करना है; और यदि वही धारा 142(ख)

के तहत निर्धारित समय के भीतर दर्ज नहीं की जा सकी, तो उसका सहारा परंतुक का लाभ उठाना है, न्यायालय को पर्याप्त कारण से संतुष्ट करना है। प्रश्न (ii) का उत्तर तदनुसार दिया गया है।"

9. हम इस विचार के हैं कि प्रतिवादी दूसरे मुद्दे पर निर्धारण के लाभ का हकदार होगा, जैसा कि ऊपर उद्धृत किया गया है।

10. इसलिए, निम्नलिखित आदेश:

(i) छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश का दिनांक 28 नवंबर 2018 का आक्षेपित निर्णय और आदेश रद्द किया जाएगा; और

(ii) प्रतिवादी को एक नई शिकायत दर्ज करने की स्वतंत्रता होगी और चूंकि पिछली शिकायत परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 142(ख) द्वारा निर्धारित समय के भीतर प्रस्तुत नहीं की जा सकी, प्रतिवादी को परंतुक का लाभ उठाने की स्वतंत्रता होगी, विचारण न्यायालय को शिकायत दर्ज करने में देरी के लिए पर्याप्त कारण से संतुष्ट करना होगा।

11. यदि इस आदेश की तारीख से दो महीने की अवधि के भीतर दूसरी शिकायत दर्ज की जाती है, तो हम विचारण न्यायालय से अनुरोध करते हैं कि वह शिकायत का निपटारा छह महीने की अवधि के भीतर करे।"

14. योगेंद्र प्रताप सिंह (सुप्रा) और गजानंद बुरंगे (सुप्रा) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित उपरोक्त कानून से यह स्पष्ट है कि ऐसे मामले में जहाँ चेक के आहरक को दी जाने वाली सूचना में निर्धारित पंद्रह दिनों की अवधि की समाप्ति से पहले शिकायत दर्ज की गई थी, न्यायालय उसका संज्ञान नहीं ले सकता है। हालांकि, उसी वाद कारण पर दूसरी शिकायत को मान्य माना गया है और ऐसी शिकायत दर्ज करने में देरी को माफ किया गया माना जाएगा।
15. इस न्यायालय की सुविचारित राय में, उपरोक्त कानून निर्धारित करने का मुख्य उद्देश्य समयपूर्व शिकायतों को दर्ज करने की प्रथा को कम करना था। हालांकि, ऐसे मामलों में जहाँ 1881 के अधिनियम की धारा 138 (ग) के संदर्भ में पंद्रह दिनों की अनिवार्य अवधि की समाप्ति से पहले शिकायतें पहले ही दर्ज की जा चुकी हैं, नई शिकायत दर्ज करने की स्वतंत्रता प्रदान करके, एक संतुलन स्थापित किया गया है ताकि परिवादी को उपचारहीन न छोड़ा जाए। यदि ऐसी परिस्थितियों में, उन्हीं तथ्यों के आधार पर दूसरी शिकायत

प्रस्तुत की जाती है, तो ऐसी शिकायत अभियुक्त के लिए दोहरे दंड का खतरा नहीं होगी।

16. अपीलकर्ता को केवल इसलिए उपचारहीन नहीं छोड़ा जा सकता क्योंकि उसने पंद्रह दिनों की सांविधिक अवधि की समाप्ति से पहले एक समयपूर्व शिकायत दर्ज की है। यह कानून की स्थापित स्थिति है कि किसी भी व्यक्ति को उपचारहीन नहीं छोड़ा जाएगा और व्यक्ति ने कानून के न्यायालय के समक्ष जो भी शिकायतें उठाई हैं, उनकी योग्यता के आधार पर जांच की जानी चाहिए।
17. अपीलकर्ता को किसी ऐसे कार्य के लिए दंडित नहीं किया जा सकता है जो समयपूर्व था और उसके रास्ते में एक विधिक बाधा थी। इसलिए, अपीलकर्ता को उपचारहीन नहीं किया जा सकता है और उसे उस विधिक बाधा के कारण पीड़ित नहीं होना चाहिए जो इसका कारण थी और निर्धारित समय के भीतर कार्य नहीं कर रही थी।
18. "उबी जस इबी रेमेडियम" कानून का एक स्थापित सिद्धांत है और यह प्रदान करता है कि बिना उपचार के कोई गलत कार्य नहीं है और जहाँ एक विधिक अधिकार है, वहाँ एक उपचार होना चाहिए। जब प्रतिवादी द्वारा जारी चेक अनादरित हुआ तो अपीलकर्ता को विधिक क्षति हुई। उसने कानून द्वारा निर्धारित सांविधिक अवधि के पूरा होने की प्रतीक्षा किए बिना समयपूर्व चरण में अपनी शिकायत के निवारण के लिए कानून के न्यायालय का दरवाजा खटखटाया।

उसकी समयपूर्व शिकायत को खारिज करके, उसे उपचारहीन नहीं छोड़ा जा सकता है। उसे अपनी शिकायत के निवारण के लिए उन्हीं तथ्यों पर दूसरी शिकायत प्रस्तुत करने का पूरा अधिकार है।

19. एशबी बनाम व्हाइट के अग्रणी मामले में, जो (1703) 92 ईआर 126, (1703) 2 एलडी रेम 938, (1703) 1 एसएम एलसी (13 वां संस्करण) 253 में रिपोर्ट किया गया और 01.01.1703 को निर्णय किया गया, यूनाइटेड किंगडम में किंग्स बेंच के न्यायालय ने टिप्पणी की कि जब कानून किसी व्यक्ति को अधिकार प्रदान करता है तो उसे उसे प्रतिपादित और बनाए रखने का साधन होना चाहिए और यदि उसे उसके प्रयोग और आनंद में चोट पहुँचती है तो उसे उपचार मिलना चाहिए और अधिकार के अभाव और उपचार के अभाव के लिए एक अधिकार की कल्पना करना व्यर्थ है।
20. चेक के आहरक को केवल इस तकनीकी आधार पर अभियोजन से बचने की अनुमति नहीं दी जा सकती है कि 1881 के अधिनियम की धारा 138 (ग) के जनादेश के अनुसार पंद्रह दिनों की सांविधिक अवधि की समाप्ति से पहले उसके खिलाफ एक समयपूर्व शिकायत दर्ज की गई थी। चेक के ऐसे आहरक को चेक के धारक द्वारा उन्हीं तथ्यों पर दायर दूसरी अनुवर्ती शिकायत में अभियोजित किया जाना चाहिए। चेक का आहरक उसके द्वारा जारी चेक के अनादरण के दंडात्मक परिणामों से मुक्त नहीं होगा।

21. योगेंद्र प्रताप सिंह (सुप्रा) और गजानंद बुरंगे (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णयों का अनुसरण करते हुए, यह सुरक्षित रूप से माना जा सकता है कि अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय कानून की दृष्टि में मान्य नहीं है और इसे रद्द किया जाना चाहिए और रद्द किया जाता है। अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, निवाई, जिला टोंक द्वारा पारित निर्णय को संशोधित किया जाता है, जिसमें अपीलकर्ता को आज से एक महीने की अवधि के भीतर अभियुक्त-प्रतिवादी के खिलाफ एक नई आपराधिक शिकायत दर्ज करने की स्वतंत्रता प्रदान की जाती है। यदि अपीलकर्ता द्वारा एक महीने की अवधि के भीतर ऐसी शिकायत दर्ज की जाती है, तो शिकायत दर्ज करने में देरी को 1881 के अधिनियम की धारा 142 के परंतुक के तहत माफ किया गया माना जाएगा। विचारण न्यायालय से अपेक्षा की जाती है कि वह अभियुक्त-प्रतिवादी को सुनवाई का उचित अवसर प्रदान करने के बाद उक्त शिकायत का शीघ्रता से निपटारा करे, जितनी जल्दी हो सके, अधिमानतः उसके बाद एक वर्ष की अवधि के भीतर।
22. विचारण न्यायालय को आगे निर्देश दिया जाता है कि वह रिकॉर्ड पर प्रमाणित प्रतियों को बनाए रखने के बाद सभी मूल प्रमाणित दस्तावेजों को परिवादी-अपीलकर्ता को वापस कर दे।

23. तदनुसार, यह वर्तमान आपराधिक अपील निस्तारित की जाती है।
स्थगन आवेदन और सभी आवेदन (यदि कोई लंबित हैं) भी निस्तारित किए जाते हैं।
24. यह अनावश्यक है कि विचारण न्यायाधीश मामले की योग्यता के आधार पर और दोनों पक्षों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य पर विचार करने के बाद मामले का निर्णय करेगा। विचारण न्यायालय शिकायत का निर्णय करते समय ऊपर की गई किसी भी टिप्पणी से प्रभावित नहीं होगा।

(अनूप कुमार ढांड),जे

एमआर/59

अस्वीकरण:- स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय केवल वादियों के अपनी भाषा में लाभ के लिए हैं तथा इनका किसी अन्य उद्देश्य के लिए उपयोग नहीं किया जा सकता। निर्णय का अंग्रेजी संस्करण सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए प्रामाणिक होगा और इसे लागू करने में प्राथमिकता दी जाएगी।

